मन्नू भण्डारी तथा राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में साहित्य और परिकल्पना का अध्ययन

डॉ0 राजकुमार

असि0 प्रोफे0, मॉडल पब्लिक एजूकेशन कॉलेज, चन्दौसी

सारांश

मनुष्य सामाजिक प्राणी है। वर्तमान का अनुभव करना उसकी नीयति है। सभी प्राणिओं में मनुष्य सर्वश्रेष्ठ है, सहायक और परिकल्पना की दृष्टि से पथ प्रदर्शक है। कल्पना शक्ति को समझना कल्पना शब्दवोद्य को साकार करना ही मन की भावना की उपस्थिति है। कल्पना प्रकृति की शक्ति, जो मुख्य रूप से कलाकार को प्रेणा देती है और कलाभव पक्ष के मूल में रहती है। दाँते ने कहा है ''कल्पना को काव्य की प्रतिभा माना है।'' डा0 नगेन्द्र ने कहा है कि ''अनुभूति ही अभिव्यक्ति है और अभिव्यक्ति ही काव्य है।''

परिकल्पना साहित्य और समाज एक दूसरे के पूरक है क्योंकि साहित्यकार की अनुभूति ही उसकी अभिव्यक्ति होती है। साहित्य लोक जीवन का प्रतिबिम्ब है इसीलिए समाज में बिखरे संघर्षों के जाल से साहित्यकार को परिचय करना अनिवार्य हो गया है। मन्नू भण्डारी तथा राजेन्द्र यादव के उपन्यासों की परिकल्पना शक्ति को जीवन दर्शन की मानवता, बौद्धिकता, लोकमंगल की भावना का सत् साहित्य में सत्त प्रभावित है। यही साहित्य की परिकल्पना है।

मूल शब्दार्थ–

इमेजीनेशन	–	*कल्पना*
संवेग	–	*मन भाव*
कान्सैप्ट	–	*अवधारणा।*
परिकल्पना	–	*चारों ओर, इधर–उधर*
उत्थान	–	*ऊपर उठना*
अनुराग	–	*प्रेम*

शोध पत्र का संक्षिप्त विवरण निम्न प्रकार हैः

डॉ0 राजकुमार,

''मन्नू भण्डारी तथा राजेन्द्र यादव के उपन्यासों में साहित्य और परिकल्पना का अध्ययन'

शोध मंथन,

सितम्बर 2017,

पेज सं0 54–61

http://anubooks.com/?page_id=581

Artcile No. 9 (SM 447)

(क) साहित्य और परिकल्पना :–

मनुष्य वाक्शक्ति से सम्पन्न प्राणी है। अतः उसका अतीत का ज्ञान उसकी वाणी के रूप में सुरक्षित है और उसका वर्तमान का अनुभव और ज्ञान संक्रमणशील है– दूसरों को भी प्राप्त होता है और प्रभावित करता है। वाणी का वरदान पाकर ही मनुष्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है। उसके आधार पर मानव जगत का निर्माण और विकास हो सका।[1] संगठन और विकास की अदभुत् क्षमता रखने वाले मानव की वाणी साहित्य के रूप में सुरक्षित है। युग–युग से श्रुति–पद्वति पर या लिपिबद्ध होकर जो भी वाणी सुरक्षित है, ज्ञानराशि के संचित कोश के रूप में वह साहित्य का रूप लेकर समाज का मार्गदर्शन करती रही है। साहित्य समाज का दर्पण है। उसका पथ–प्रदर्शक है, किन्तु इस दर्पण और पथ–प्रदर्शक को समाज जिस माध्यम से किसी भी विधा में प्रस्तुत करता है, उसके लिए उसे कल्पना का सहारा लेना पड़ता है। अतः यह जान लेना अत्यन्त आवशयक है कि कल्पना एवं परिकल्पना से हमारा या विद्वत्जनों का क्या तात्पर्य है–

(अ) कल्पना एवं परिकल्पना का अर्थ :–

कल्पना को समझने के लिए नाना प्रकार के प्रयास हुए हैं। अति प्राचीन काल से लेकर आज तक इसके सम्बन्ध में कुछ न कुछ कहा जाता रहा है और नाना प्रकार की इसकी परिभाषायें प्रस्तुत की गयी हैं। '' वह शक्ति जो अन्तःकरण में ऐसी वस्तुओं के स्वरूप उपस्थित करती है जो उस समय इन्द्रियों के समक्ष उपस्थित नहीं होती, कृ किसी एक वस्तु में अन्य वस्तु का आरोप, पाश्चात्य साहित्यालोचन और सौन्दर्य शास्त्र के अनुसार कलात्मक सर्जना की शक्ति।[2]

1. वाचामेव प्रसादेन लोकयात्रा प्रवर्तते। – काव्यादर्श (दण्डी), 1, 3
2. हिन्दी शब्द सागर भाग – 2 पृ0 856

'' कल्पना के समानान्तर शब्द इमेजीनेशन का मूल है लैटिन का 'Imagination। इस लैटिन शब्द का अर्थ है '' मानसिक चित्र (इमेज) की सृष्टि समझा जाता रहा है। इस प्रकार से Imagination का अर्थ रूपों की सृष्टि करना हो गया है। Imagination के साथ एक शब्द और है 'fancy' इसे स्वच्छन्द कल्पना, स्वकल्पना, कपोल कल्पना आदि शब्दों से व्यक्त किया जा सकता है। साधरणतः फैन्सी से यह समझा जाता है कि यह वास्तविकता से परे है, कि जैसे यह अपने में दिवास्वप्न को समाहित किये हुए है। इसमें विचार का तारतम्य नहीं होता और कभी–कभी वे विचार हास्यकर होते हैं जिनको यथार्थ से न जैसे कोई प्रयोजन है और न जैसे वे यथार्थ की परवाह ही करते हैं। समझा जाता है कि यह स्वकल्पना सिर्फ मनोविनोद के लिए होती है।''[3] लेखन के समय में Imagination और 'fantacia' में कोई अन्तर नहीं माना जाता था। अतएवं प्लेटो ने नैतिकता के आधार पर कल्पना से मनुष्य को सावधान रहने की सलाह दी है। उनका कहना था कि कवि किसी के प्रभाव में आकर अवास्तव जगत की सृष्टि कर उन संवेगों को उद्दीप्त करता है जो पाठकों को अविवेकी बनाते हैं। किन्तु अरस्तू, प्लेटो से सहमत नहीं है। अरस्तु का कहना कि साहित्य या कला अधिक वास्तविकता के साथ 'वस्तु' को चित्रण होता है। कला सृष्टि के पीछे दो शक्तियाँ क्रियाशील रहती हैं–

1. प्रकृति की शक्ति, जो मुख्य रूप से कलाकार को प्रेरणा देती है और कला भाव पक्ष के मूल में रहती है।

2. कलाकार के अन्तःकरण की अपनी शक्ति जो प्रकृति की प्रेरणा से क्रियाशील होती है और जिससे उसके अन्तः में भावों का उदय होता है। एतएव रूप विधान को प्रधान्य नहीं देने पर इसे मानना ही पड़ेगा कि कवि के भावों की समुचित अभिव्यक्ति के लिए यह रूप विधान जो कल्पना के द्वारा किया जाता है, एक साधन है और इससे कवि को सहायता मिलती है।

3. पाश्चात्य काव्य शास्त्र – रामपूजन तिवारी, पृ0 7

अरस्तु ने कल्पना को निस्संग भाव से समझने की चेष्टा की है। उसका कहना है कि कोई भी अवधारणा (कांन्सैप्ट) अपने अनुरूप कल्पना के बिना संभव नहीं है। अरस्तू के इस मत का बहुत अधिक प्रभाव आलोचना पर पड़ा और शताब्दियों तक प्रभाव बनाये रहा। दाँते ने कल्पना को काव्य – प्रतिभा कहा है। कल्पना के द्वारा ही वह अभिव्यक्ति अथवा दृष्टि को संभव मानता है। उनके अनुसार फैन्टेसी के बिना कविता पूरी नहीं हो सकती। होरेस ने कल्पना को असमान अनुभूति (Decaying Sense) कहा है। उसका कहना है कि कल्पना और स्मृति में कोई अन्तर नहीं है। यह कल्पना, यह स्मृति सोते या जागते हर समय विद्यमान रहती है। कविता के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट करते हुए होरेस ने कहा है कि विवेक (Judgement) से कविता में संरचना और शक्ति (Structure And Strength) का हाव–भाव होता है और फैन्शी से आलंकारिता का। इस शताब्दी में बौद्धिकता पर अधिक बल दिया जाता रहा और फैन्सी को विवेक तथा तर्कण का परिपंथी माना गया। एडीशन ने अपनी रचना (प्लैजर्स ऑफ दा इमेजीनेशन) सन 1712 ई0 में आँखों से प्रत्यक्ष की हुई वस्तुओं की प्रतिच्छवियों को और कल्पना को एक ही माना। एडीशन के अनुसार कलाकृति में कल्पना का व्यापार दो रूपों में दिखलायी पड़ता है। सबसे पहले तो वह कलाकार के मन को प्रभावित करती है। कल्पना का यह पहला व्यापार है। कल्पना का दूसरा व्यापार यह है कि वह पाठक या श्रोता के चित्त के अनुकूल प्रतिक्रिया के लिए तैयार करती है। प्रथम व्यापार में कल्पना केवल प्रत्यक्ष या प्रारम्भिक आनन्द की ही सृष्टि में संलग्न रहती है। यह प्रत्यक्ष आनन्द तब उत्पन्न होता है जब तक कि हमारी इन्द्रियाँ बाहरी उत्तेजना के कार्यक्षेत्र की सीमा के भीतर रहती हैं परन्तु जब ये बाहरी उत्तेजनाएँ किसी कला वस्तु जैसे मूर्ति, चित्र या काव्य का रूप धारण कर लेती हैं तो प्रत्यक्ष आनन्द उत्पन्न करने साथ उनमें अप्रत्यक्ष आनन्द उत्पन्न करने की भी शक्ति आ जाती है। काव्यकृति में कल्पना का यह दूसरा व्यापार अधिक सक्रिय रहता है।

'परिकल्पना शब्द पर विचार करने के लिए यह आवश्यक है कि इस शब्द का विघटन किया जाए अर्थात् परि+कल्पना। 'परि' शब्द का अर्थ बताते हुए संस्कृत हिन्दी कोश (वामनशिवाराम आप्टे) ने बताया है 'परि' अर्थात् यह उपसर्ग के रूप में धातु या प्रत्ययों से पूर्व लगकर निमनांकित अर्थ प्रकट करता है–

1. (क) चारों ओर, इधर–उधर, इर्द–गिर्द।

2. (ख) बहुत, अत्यन्त, तथा पष्थक्करणीय अव्यव (सम्बन्ध बोधक) के रूप में निम्नांकित अर्थ है – (i) की ओर, की दशा में, की तरफ, के सामने कृ (ii) क्रिया विशेषण उपसर्ग के रूप में संज्ञाओं से पूर्व लगकर, जबकि क्रिया से सीधा सम्बन्ध न हो, बहुत, अति, अत्यधिक, अत्यन्त आदि अर्थ प्रकट करता है कृ (iii) कर्मधारय समास के अन्त पें (परि) का अर्थ है शान्त, क्लान्त, ऊबा हुआ। इसी शब्दकोश में परिकथा शब्द का अर्थ है आख्यानप्रिय व्यक्ति के तथा उसके साहसिक कार्य को बतलाने वाली रचना, काल्पनिक तथा कल्प का अर्थ इसी शब्द कोश में है – (i) व्यवहार में लाने योग्य, सशक्त संभव (ii) उचित, योग्य, सही (iii) समर्थ, सक्षम कृकृ प्रस्ताव, सुझाव, निश्चय, संकल्प आदि। पष्ठ संख्या 580 पर ही परिकल्पनम् अर्थात् परकिल्पना शब्द के अर्थ हैं (i) निर्णय करना, स्थिर करना, फैसला करना निर्धारण करना (ii) उपाय निकालना, आविष्कार करना, रूप देना क्रमबद्ध करना (iii) जुटाना सम्पन्न करना इन समस्त व्याख्याओं और अर्थों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि परिकल्पना से तात्पर्य, विशेष रूप से साहित्यिक परिकल्पना से तात्पर्य है– साहित्यकार द्वारा अपने समाज, उसके परिवेश, उसमें घटित होने वाले समस्त दृश्य, परिदृश्य, घटनाएँ, जीवन्तचरित्र, समस्तवर्गों में व्याप्त संगतियाँ मानव जाति के उत्थान–पतन, आदि से सम्बन्धित विभिन्न आन्दोलन, उतार–चढ़ाव, राजनैतिक उठापठक, साहित्यिक, दार्शनिक कलात्मक अभिरूचियाँ एवं उपलब्धियाँ आदि–सभी पर दृष्टि रखते हुए अपने साहित्य में विधा के अनुरूप वाणी देना उसे प्रबन्ध पूर्वक कल्पना के सहारे संयोजित करना और समाज के लिए उपयोगी रूप में प्रस्तुत करना।

(आ) परिकल्पना का महत्वः– साहित्य के प्रयोजन पर विचार करते हुए डॉ0 नगेन्द्र ने कहा है कि अनुभूति ही अभिव्यक्ति है और अभिव्यक्ति ही काव्य है। यद्यपि ये विचार क्रोंचे के हैं तथापि डॉक्टर नगेन्द्र इन विचारों से पूर्णतः सहमत हैं। साहित्यकार अपने जीवन में दिन–प्रतिदिन व क्षण–प्रतिक्षण घटित होने वाली घटनाओं से प्रभावित होता है और उसे गहन अनुभूति के द्वारा साहित्य में अभिव्यक्ति देता है। जिस आकार–प्रकार में वह उसे प्रस्तुत करता है, वह आकार–प्रकार उसकी रूप रचना, उसका भाव और शिल्पगत संगठन अर्थात् उसका सम्पूर्ण कथ्य और शिल्प का समन्वित रूप ही परिकल्पना है। स्पष्ट है कि परिकल्पना के अभाव में रचनाकार अपने विचार, अपने निर्णय, अपने निश्चयों, अपने उद्देश्य को साहित्य के माध्यम से व्यक्त कर ही नहीं सकता है। साहित्य के नाम पर परिकल्पनाओं के अभाव में, जब–जब सष्जन हुआ है, वह सृजन न तो समाज का ही कोई कल्याण कर सका है और न ही वह दीर्घजीवी ही हुआ है। अतः कालजयी या अमर साहित्य की रचना के लिए परिकल्पना का होना अत्यन्त आवश्यक है। चाहे वह साहित्यकार कवि हो, कहानीकार हो, उपन्यासकार हो या किसी अन्य विधा का लेखक हो। प्रोफेसर कृष्ण जी भटनागर परिकल्पना का महत्व बताते हुए कहते है ''परन्तु कविता जीवन की परिकल्पनात्मक अभिव्यक्ति ही है, जीवन के सौन्दर्यतात्मक और आनन्दात्मक पक्ष का उद्घाटन उसके द्वारा होता है। स्पष्टतया वह दर्पणगत पृष्ठछवि–रिफ्लेक्शन– नहीं, रिप्रेजेन्टेशन है। जीवन के पुनर्सर्जन के हेतु कवि सामाजिक परिवेश के जल का संचय कर अपनी भावनाओं को उदग्र

ताप में तपाकर वाणी–विधान द्वारा ऐसी वर्षा करता है जिससे सबके हृदय समान भाव से सहज हो उठते हैं।"[4]

(इ) परिकल्पना साहित्य और समाज :– साहित्यकार जब लेखन कार्य प्रारम्भ करता है उससे पूर्व वह गहन चिन्तन–मनन की प्रक्रिया से गुजरता है। उसके इस चिन्तन–मनन का आधार होता है उसका सामाजिक परिवेश। सामाजिक परिवेश के बीच उसके व्यक्तित्व का विकास होता है, उसकी शिक्षा–दीक्षा होती है।

4. कवि का सामाजिक दायित्व – पृ0 22

अपने पालन–पोषण की अवधि में उसे विविध सम–विषम परिस्थितियों से गुजरना पड़ता है। यही सम–विषम परिस्थितियाँ उसके व्यक्तित्व को कहीं बनाती है तो कहीं कुण्ठित करती हैं, तो कुण्ठा के परिणाम स्वरूप उसकी शक्ति का अनुभूतिगामी बनाती हुई उसे रचनाशील बनाती हैं। क्योंकि साहित्यकार की अनुभूति ही उसकी अभिव्यक्ति होती है। इसीलिए वह उस अनुभूति को निश्चित परिकल्पना के माध्यम से साहित्य में अभिव्यक्त करता है। युगों से विश्व के महान कवि मन के अप्रकाशित कोष्ठों को अपनी प्रतिभा–किरण से अनावृत करते रहे हैं। पात्रों के मानस में उठतीं–गिरतीं भाव–उर्मियों में समाकर उनकी गम्भीरता को मापते रहे है। उनकी साधना में तभी शैथिल्य का आभास हुआ है, जब उनकी लेखनी के पीछे उनका कलाकार नहीं बोला है, जब उनके काव्य में हृदय का आवेग व्यक्त नहीं हुआ है, जब वे स्वरण के जाज्वल्य में और आवरण से ढके सत्य के मुँह को उघाड़ने में हिचके हैं। कवि को जो अनुभव समाज या प्रकृित से प्राप्त होता है उसकी अनुवृत्ति और प्रकाशन में स्वाधीन अनुभूति में कर्ता का स्वत्व प्रधान होता है और अपेक्षाकृत वस्तु गौण रह जाती है। इसी से एक वस्तु का ज्ञान सबको समान होने पर भी अनुभूति असमान होती है। सत्यतः कवि स्वयंभू – व्यक्तित्व का निर्माण स्वंय करता है। अप्रितम चिन्तन, चेतना, मनीषा और प्रतिभा के द्वारा अपने दर्शन एवं आदर्श का संचयन वह स्वंय करता है। अपने कर्त्तव्य की बोधता से परिचित प्रत्येक प्रभुत्व और आत्मस्थ कवि के लिए भी व्यक्तिगत स्वातन्त्रय के स्वागत के लिए भी, समाजिक दायित्व के लौह बन्धन स्पृहणीय हैं। समाज के साथ–साथ नीति धर्म, आचार, अर्थ आदि शास्त्रों की प्रतिद्वन्द्वात्मक उपेक्षा करने वाली वृत्ति स्वस्थ नहीं है। कभी–कभी समाज में प्रचलित विशिष्ट दार्शनिक विचारधारा, राजनैतिक मत अथवा धार्मिक वितण्डतावाद प्रभावशाली एवं शक्तिमान हो जाते हैं कि साहित्य उनका अनुगामी मात्र बनकर रह जाता है। साहित्य के लिए यह प्रवृत्ति घातक है। प्रायः साहित्यकार किसी विशिष्ट चरित्र को मुख्य पात्र बनाकर अपने जीवन दर्शन को सजीवता प्रदान करता है। इसीलिए पाश्चात्य नाटकों में चरित्र–चत्रिण को बहुत अधिक महत्व दिया गया है। राजनैतिक क्षेत्र में फासिज्म और साम्यवाद के आगमन से साहित्यकारों पर उनका अंकुश कठोर हो गया और काव्य–क्षेत्र में इसी वाद का प्रचार धीरे–धीरे उसकी सार–सत्ता को ही चर जाता है। साहित्य में स्थूल प्रचारमत्ता प्रविष्ट होकर उसे अपने महत्व या लक्ष्य से कोसों दूर ले जाती है।

'दर्द दिया है' की भूमिका से नीरज के यह शब्द उद्धरणीय हैं ''कवि बनना है तो पहले महापुरूष बनो–यह मेरे काव्य का शीर्ष वाक्य है। इसके विपरीत आज वृहद साहित्य वर्ग

कुण्ठाभिभूत होकर नग्न वासना को विश्लेषण–संश्लेषण के साथ रस लेकर चित्रित करता हुआ वाचाल सूत्र को प्रस्तुत कर रहा है। हिन्दी उपन्यासों में ऐसे अनेक उपन्यास हैं जैसे दिल्ली का दलाल, चन्द हसीनों के खतूत, अमर अभिलाषा, दादा कामरेड, नदी के द्वीप, रतिनाथ की चाची, मयखाना, वेश्या पुत्र, चाँदनी की रात, दिल्ली का कलंक, आदि में वासना विषैले सर्पों के रूप में उदगारित हुई है। 'बलचनमा' में अनुचित गालियाँ को परिष्कृत रूप में अतिमनोविश्लेषण के नाम पर, अपनी कुण्ठा ग्रस्त मनोवृत्तियों को प्रस्तुत कर ऐसे ही कुछ रोगियों का गर्भित अंक चित्रित कर अपने कर्त्तव्य कर्म की इतिश्री समझ लेने वाले प्रशंसित नहीं हो सकते।'' सुश्री महादेवी के शब्द उद्धरणीय है – ''संसार में सबसे अधिक दण्डनीय व्यक्ति वह है जिसने यथार्थ के कुत्सित पक्ष को एकत्र कर नरक का आविष्कार कर डाला क्योंकि उस चित्त ने मनुष्य की सारी बर्बरता को चूम कर ऐसे दारवाजे को प्रदर्शित किया है कि जीवन के कोने–कोने में नरक गढ़ा जाने लगा।'' (यथार्थ और आदर्श) अशुभ की क्षति साहित्य का बड़ा पुनीत प्रतिष्ठान है। जो साहित्यकार ऐसा नहीं करता उस को सरस्वती के मन्दिर में प्रवेश का अधिकार नहीं है। डॉक्टर हजारी प्रसाद द्विवेदी का 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है' से उद्धत् यह वाक्य द्रष्टव्य है – मैं साहित्य को दृश्य की दृष्टि से देखने का पक्षपाती हूँ। जो वाग्जाल मनुष्य को दुर्गति, हीनता और कर्म को पंकिलता से बचा न सके, जो उसकी आत्मा को तेजोददीप्ति न बना सके, जो उसके हृदय को परदुखकातर और सम्वेदनशील न बना सके, उसे साहित्य कहने में मुझे संकोच होता है। मार्क्सवादियों के अनुसार कलाकार की मानस मंथनकारिणीवेदना निस्प्ह कलाशोषितों के अश्रुप्लावित हृदय–तल में बैठकर ही विकास पाती है और भूख उपेक्षा और पीड़ा से संघर्षरत निर्धनों के रीते नयनों में ही उसका स्वरूप निखरता है। आज जबकि साहित्यकार ने झनझनाकर टूटती हुई राजनैतिक दासता की श्रृंखलाओं का स्वर सुना है, उसके दायित्व में महती वृद्धि हो गयी है। परन्तु उसका निर्वहन करना पर्याप्त कठिन कार्य है।''

साहित्य लोक जीवन का प्रतिबिम्ब है। इसीलिए समाज में बिखरे संघषों के जाल से साहित्यकार को परिचय करना अनिवार्य हो गया है। ''आज विश्व युद्ध की विभीषिका से ग्रस्त हो पतन के कगार पर खड़ा एक धक्के की राह देख रहा है, मानवता मरण के अंधकार से भरी दुर्गम घाटियों से गुजर रही है। ऐसी स्थिति में साहित्यकार का दायित्व बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। आज उसे विश्वविद्यालयों में अध्ययन से प्राप्त जीवन–दर्शन को छोड़ कर विश्व के विद्यालय में प्रविष्ट हो जीवन को दर्शन करना है। जीवन के विचार–शून्य–शोधित स्तरों को मानसिक खाद्य और बौद्धिकता के मृगमरूजल में भटकती हुई तृषित मानवता को सम्वेदना और श्रद्धा का जल देना है। आज के कवि को अपने लिए अनागरिक होकर भी संसार के लिए गृहीत, अपने प्रति भीतराघात होकर भी सबके प्रति अनुराग, अपने प्रति सन्यासी होकर भी सबके लिए कर्मयोगी होना।'' (महादेवी वर्मा, आधुनिक कवि –1)

मानवता के महान उपासकों की प्रत्येक साधना में शिव की आराधना अपेक्षित है। लोक मंगल की भावना सत् साहित्य में सतत् प्रवाहित है।

(ख) मन्नू भण्डारी एवं राजेन्द्र यादव का व्यक्तित्व एवं परिस्थितियाँ :–

(अ) परिवार–माता–पिता का आर्थिक स्तर, शिक्षा, विवाहिक – जीवन एवं व्यवसाय तथा सन्तति आदि–

मन्नू भण्डारी का जन्म मानपुरा गांव में मध्य प्रदेश के मानपुरा गाँव में 3 अप्रेल 1931 में हुआ। उनके पिता एक सम्मानित और प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। अध्ययन और अध्यापन में विशेष रूचि रखते थे। उन्होंने अपने समय में एक विशेष शब्दकोष तैयार किया था जो उन्हें यश और प्रतिष्ठा दोनों ही दे गया। वे कांग्रेस के साथ–साथ समाज सुधार से भी जुड़े हुए थे।

सहायक ग्रंथ सूची

1. *एक इंच मुस्कान* — *मन्नू भण्डारी तथा राजेन्द्र यादव*
2. *आपकी बन्टी* — *मन्नू भण्डारी*
3. *महाभोज* — *मन्नू भण्डारी*
4. *कलवा* — *मन्नू भण्डारी*
5. *स्वामी* — *मन्नू भण्डारी*
6. *प्रेत बोलते हैं (सारा आकाश)* — *राजेन्द्र यादव*
7. *उखड़े हुये लोग* — *राजेन्द्र यादव*
8. *कुलटा* — *राजेन्द्र यादव*
9. *शह और मात* — *राजेन्द्र यादव*
10. *आज का हिन्दी उपन्यास* — *इन्द्रनाथ मदान*
11. *हिन्दी उपन्यास साहित्य का अधययन* — *गणेशन*
12. *ऐतिहासिक उपन्यास और उपन्यास कार* — *गोपीनाथ निवारी*
13. *हिन्दी उपन्यास–समाजशास्त्रीय विवेचन* — *चण्डी प्रसाद जोशी*
14. *स्वातन्त्र्योत्तर हिन्दी ग्राम चेतना* — *ज्ञान चन्द्र गुप्त*
15. *हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद* — *त्रिभुवन सिंह*
16. *हिन्दी उपन्यास–शिल्प और चिन्तन* — *त्रिभुवन सिंह*
17. *दिनकर के काव्य में युगीन चेतना* — *पन्ना द्विवेदी*
18. *मार्क्सवाद और उपन्यासकार यशपाल* — *पारनाथ मिश्र*
19. *नागार्जुनः जीवन और साहित्य* — *प्रकाश चन्द्र भट्ठा*
20. *हिन्दी उपन्यासों में नारी चित्रण* — *बिन्दु अग्रवाल*
21. *हिन्दी उपन्यास विसर्जन रचन विधान और युग बोध* — *बसन्ती पन्थ*
22. *आधुनिक हिन्दी उपन्यासः उद्‌भव और विकास* — *बचन*
23. *भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों में युग चेतना* — *बैजनाथ शुक्ल*

24.	हिन्दी उपन्यासः युगचेतना और पाठकीय संवेदना	मुकुन्द द्विवेदी
25.	हिन्दी के आँचलिक उपन्यास और उनकी शिल्पविधि	डॉ0 आदर्श सक्सैना
26.	हिन्दी उपन्यास साहित्य का सांस्कृतिक अध्ययन	रमेश तिवारी
27.	हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास	डॉ0 कमल कुमार जौहरी
28.	स्वात्रयोत्तर हिन्दी हिन्दी उपन्यास	डॉ0 कान्ती वर्मा
29.	आधुनिक हिन्दी काव्य में यथार्थवाद	डॉ0 पुरूषराम शुक्ल 'विरही'
30.	हिन्दी के आँचलिक उपन्यास	प्रकाश वाजपेयी
31.	हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन	डॉ0 गणेशन
32.	हिन्दी उपन्यास शिल्पः बदलते परिप्रेक्ष्य	डॉ0 प्रेम भटनागर
33.	हिन्दी उपन्यासों में कथाशिल्प का विकास	डॉ0 प्रताप नारायण टंडन
34.	हिन्दी उपन्यासों का शास्त्रीय विवेचन	डॉ0 महावीर मल लोढा
35.	हिन्दी उपन्यासों में नये प्रयोग	ब्रज विलास श्रीवास्तव
36.	हिन्दी के राजनैतिक उपन्यासों का अनुशीलन	डॉ0 ब्रजभूषण सिंह 'आदर्श'
37.	समस्यामूलक उपन्यासकार प्रेमचन्द	डॉ0 महेन्द्र भटनागर
38.	हिन्दी उपन्यास साहित्य का उद्‌भव और विकास	डॉ0 लक्ष्मीकान्त सिन्हा
39.	हिन्दी उपन्यासों में परिवारिक जीवन	महेन्द्र कुमार जैन
40.	हिन्दी उपन्यासः एक सर्वेक्षण	महेन्द्र चतुर्वेदी
41.	हिन्दी उपन्यास प्रयोग के चरण (भुमिका)	डॉ0 विजय पाल सिंह
42.	हिन्दी उपन्यासों में चिरत्र चित्रण का विकास	डॉ0 रणवीर रांग्रा
43.	प्रेम चन्द और शरद चन्द्र के उपन्यास–मनुष्य का बिम्ब	डॉ0 सुरेशनाथ तिवारी
44.	हिन्दी उपन्यासः उपलब्धियाँ	डॉ0 लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय
45.	हिन्दी उपन्यासः एक अन्तर्यात्रा	डॉ0 रामदास मिश्र
46.	हिन्दी उपन्यास प्रेम और जीवन	डॉ0 शान्ति भारद्वाज